पूँजी के एजेंटः अठारहवीं सदी के पूर्वी गंगीय मैदानों में मातृप्रधान संरचनाएँ, कानून और कृषि-व्यवहार

Divya Bharadwaj [1]*, Dr Harendra Kumar Singh [2]**
1. Research Scholar,
2. Associate Professor
* Faculty of Social Science (Department of History), Purnea University, Purnea, Bihar, India,
** Faculty of Social Science (Department of History), Purnea University, Purnea, Bihar, India,
**K.B Jha College, Kaithar, Bihar, India
Corresponding Author: Divya Bharadwaj
Email address:- bharadwajdivya99@gmail.com

सारांश : यह लेख अठारहवीं सदी के भारत में लिंग और पूँजीवाद के इतिहासलेखन से जुड़ी पड़तालों में योगदान करता है। इस कालखंड में **राजस्व ठेकेदारी की नाजुक प्रकृति** पर केंद्रित यह लेख दर्शाता है कि **पूर्वी गंगा के मैदानों** में संपन्न महिलाओं ने किस प्रकार **मातृसत्तात्मक अधिकार** और **भावनात्मक जुड़ाव (affect)** के सहारे अपने **कृषि और वाणिज्यिक पारिवारिक उद्यमों** को व्यापारिक लेनदेन में प्रविष्ट कराया।

लेख यह स्पष्ट करता है कि **गृहस्थी (household)** इन व्यापारिक संबंधों का केंद्र थी, साथ ही विभिन्न **राजकीय और गैर-राजकीय शक्तियों** की **स्पर्धात्मक और परतदार संप्रभुताओं** का भी स्थल थी। इसके साथ-साथ, इन **मातृशक्तियों (matriarchs)** ने अपने अधिकार **गृहस्थी से बाहर** भी स्थापित किए। वे पालकियों में यात्रा करती थीं, या अपने परिजनों के माध्यम से लेन-देन करवाती थीं, और इस प्रक्रिया में उन्होंने अपने **मातृत्वाधिकार और सामाजिक प्रतिष्ठा** का प्रयोग कर अपने व्यावसायिक हितों की रक्षा की।

लेख की **दूसरी प्रमुख दलील** यह है कि **मुगलकालीन विधि**, जिसे बनारस में प्रारंभिक उपनिवेशकालीन न्यायालयों में **स्थानीय अधिकारियों द्वारा पोषित किया गया**, ने संपन्न महिलाओं को इस आर्थिक प्रणाली में भाग लेने का अवसर प्रदान किया। इन महिलाओं ने **विधिक प्रणाली के विभाजित अधिकार-क्षेत्र (jurisdictional landscape)** को गहराई से समझा और **विभिन्न न्यायिक मंचों** के बीच रणनीतिक रूप से आवाजाही की।

तीसरी दलील यह दर्शाती है कि **औपनिवेशिक कानूनों और विनियमों** ने इन महिलाओं की **भूमि-राजस्व लेनदेन में भागीदारी** को **पुनर्परिभाषित** किया और कभी-कभी उसे **कमजोर भी किया**। यह बदलाव **लिंग की अवधारणाओं** और **स्त्रीत्व व गृहस्थी की विशिष्ट समझ** के ज़रिए संभव हुए। यह लेख दर्शाता है कि बनारस की संपन्न महिलाओं को आर्थिक निर्णयों से वंचित करने के ये प्रयास **ईस्ट इंडिया कंपनी की उस उपनिवेशी कल्पना** से गहराई से जुड़े थे, जिसमें वह **एकाधिकारपूर्ण संप्रभुता** स्थापित करना चाहती थी।

[Bhardwaj, D. and Singh, H.K. पूँजी के एजेंटः अठारहवीं सदी के पूर्वी गंगीय मैदानों में मातृप्रधान संरचनाएँ, कानून और कृषि-व्यवहार. *The International Journal of Interpretation, Observation and Analysis*, 2025; Volume 3, Issue 1:70-77 (July-September). ISSN 2349-0713, Peer-reviewed (online/offline), Refereed, Indexed and International Journal (Since 2013), Global Impact Factor: 5.776

परिचय

1787 से 1794 के बीच, उत्तर भारत के **बनारस** नगर में **जसो** नाम की एक वृद्ध विधवा और उसका पुत्र **शीतल प्रसाद**, एक लंबी कानूनी लड़ाई में व्यस्त थे। यह विवाद **गिरिजा**, एक अन्य विधवा महिला, और उसके पुत्र **जयकरण** से था। जसो और उसका परिवार, जो कि राजस्व ठेकेदारी से जुड़ा हुआ था, गिरिजा और जयकरण—जो कि व्यापारी बैंकर थे—से बड़ी राशि का कर्जदार था।

जसो एक संपन्न राजस्व ठेकेदार (इजारेदार) थी, जिसने राज्य को अग्रिम में सर्वाधिक बोली लगाकर राजस्व संग्रह का अस्थायी अधिकार प्राप्त किया था। उसका परिवार उसके पुत्र, पुत्री, दामाद और नातिन से मिलकर बना था। इस परिवार ने बनारस क्षेत्र की आर्थिक वृद्धि से काफी लाभ उठाया और **कई अचल संपत्तियों** जैसे मकान, ज़मीन और बाज़ारों का मालिक बना। यह परिवार बनारस के प्रमुख राजस्व ठेकेदारों में गिना जाने लगा।

हालाँकि, बाद में यह परिवार **आर्थिक संकट** में आ गया। व्यापारिक बैंकरों के साथ इसके **नाज़ुक ऋण-संबंध** टूट गए, जिससे राज्य को तय समय पर राजस्व चुकाने की क्षमता प्रभावित हुई। यही संकट जसो और गिरिजा के बीच विवाद का कारण बना।

इस पारिवारिक झगड़े की घटनाएँ उस **व्यापक वाणिज्यिक इतिहास** का हिस्सा थीं, जिसने इस उपजाऊ क्षेत्र में **क्षेत्रीय राज्यों के गठन** को गति दी। **अठारहवीं शताब्दी** में, गंगा के मैदानी क्षेत्रों में **इजारेदारी प्रणाली** (राजस्व ठेकेदारी) ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख अंग बन चुकी थी। मुग़ल काल के दौरान कृषि विस्तार और करों के मौद्रीकरण की नीतियों से आर्थिक लेनदेन में बढ़ोत्तरी हुई और राजस्व अधिकारों की नीलामी शुरू हुई।

इन घटनाओं ने यह स्पष्ट किया कि मुग़ल राज्य में **स्थानीय राजनीति** का महत्वपूर्ण स्थान था। जैसे-जैसे मुग़ल साम्राज्य फैलता गया, ज़मींदारी शक्तियाँ मज़बूत होती गईं और साम्राज्य की शक्ति केंद्र से हटकर **प्रांतों और ज़िलों** में चली

गई। इस आर्थिक विकास ने **मुग़ल अधिकारियों के क्षेत्रीयकरण** को बढ़ावा दिया, जिससे पहले से ही विकेन्द्रित साम्राज्य में संकट उत्पन्न हुआ।

मुग़ल अधिकारी और स्थानीय शक्तिशाली लोग, जो वाणिज्यिक शक्ति के 'राजसीकरण' से उभरे थे, **व्यापारियों और इजारेदारों** की सेवाएँ लेते थे ताकि वे कृषि उपज में अपना हिस्सा बढ़ा सकें। इस वाणिज्यिक विस्तार ने ऐसे छोटे-बड़े ठेकेदारों को उभरने का अवसर दिया, जो **स्थानीय प्रभाव और संरक्षण तंत्र** का उपयोग कर राज्य से निर्धारित राशि से अधिक राजस्व अपने पास रखते थे।

1757 में बंगाल की विजय के बाद, **ईस्ट इंडिया कंपनी** ने मुग़ल परंपराओं के रक्षक के रूप में खुद को स्थापित कर, नवोदित मुग़ल उत्तराधिकारी राज्यों में वैधता प्राप्त की। जैसा कि रॉबर्ट ट्रैवर्स ने अपनी शोध में दिखाया है, इस समय **संप्रभुता और राजस्व नियंत्रण** गहराई से एक-दूसरे से जुड़े थे। इस नई व्यवस्था में **राजस्व ठेकेदारी** और अधिक तेज़ी से बढ़ी, और जसो जैसे व्यापारी परिवारों ने इस मौके का भरपूर लाभ उठाया।

इस काल की अधिकतर **व्यापारिक संस्थाएँ पारिवारिक** थीं। अनुसंधान से यह सिद्ध हुआ है कि इन परिवारों की पूंजी उठाने और अनुबंध करने की क्षमता में **रिश्तेदारी, जाति और समुदाय** की अहम भूमिका थी। **समिरा शेख** ने अपने शोध में यह दर्शाया है कि कैसे अठारहवीं शताब्दी में कई **गृहस्थ परिवार भी राजस्व ठेकेदारी** में शामिल हुए, और ज़मीन से प्राप्त कर को **मूल्यांकन, संग्रह और निवेश** की प्रक्रिया से गुजारा।

उनका यह भी तर्क है कि इन परिवारों को भी **पारिवारिक संस्थाओं** के रूप में समझा जाना चाहिए, जो **ऋण, बंधक, कर्ज़ वापसी** और **राजस्व संग्रह** की पेचीदा व्यवस्था में काम करते थे।

समकालीन शोध यह भी दर्शाता है कि अठारहवीं शताब्दी की **उद्यमिता (entrepreneurship)** को केवल पुरुषों तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता। सामाजिक **लिंग, प्रतिष्ठा और समुदाय** के साथ अर्थव्यवस्था में भागीदारी के नए दृष्टिकोण उभर रहे हैं। **मार्क्सवादी-नारीवादी विश्लेषण** के तहत यह आवश्यक है कि पूंजीवाद के इतिहास में पुरुषों के अलावा अन्य **लिंग-आधारित एजेंटों** को भी शामिल किया जाए।

राज्य-निर्माण, कृषि विस्तार और वाणिज्यिकरण जैसी प्रक्रियाएँ विभिन्न **लैंगिक और पीढ़ीगत भूमिकाओं** से गहराई से जुड़ी थीं—जैसे कि मातृशक्तियाँ, विधवाएँ, रानियाँ, सेविकाएँ, हिजड़े, संत, चेला, आदि—जिनकी **भावनात्मक, सेवामूलक और सामाजिक भूमिकाओं** ने इस काल की राजनीतिक और आर्थिक संरचना को आकार दिया।

अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में, जब उपनिवेशवाद की नींव पड़ रही थी, **सत्ता में महिलाओं की भागीदारी** देखी गई। अवध की बेगमों ने ज़मींदारी और बाज़ारों पर नियंत्रण स्थापित किया और ज़मीन, चुंगी, व अन्य करों से **अपार संपत्ति अर्जित की**। बनारस के शहरी विस्तार में भी **राजघराने की महिलाओं** का योगदान रहा।

इस लेख में, मैं यह दिखाऊँगा कि जसो और गिरिजा—ये दोनों ही विधवा और प्रभावशाली मातृशक्तियाँ—बनारस की **कृषि अर्थव्यवस्था** में गहराई से संलग्न थीं। लेख का पहला उद्देश्य यह दिखाना है कि कैसे इन दो संपन्न महिलाओं ने **मातृसत्तात्मक अधिकार** और **भावनात्मक जुड़ाव** के माध्यम से अपने परिवारों को कृषि अर्थव्यवस्था में निवेश हेतु प्रेरित किया।

दूसरा तर्क यह है कि **मुग़ल क़ानूनों** ने जसो और गिरिजा जैसे लोगों की वाणिज्यिक गतिविधियों को **सुविधा और वैधता** प्रदान की। **नंदिनी चटर्जी** के शोध से यह ज्ञात होता है कि मुग़ल कानूनों की समझ **शाही आदेश, प्रशासनिक परंपराओं, इस्लामी न्यायशास्त्र और स्थानीय रिवाजों** का सम्मिलन थी।

जब कंपनी ने अपने न्यायालय स्थापित किए, तो **महिलाएँ भी इन संस्थाओं** का हिस्सा बनीं और उन्हें अपनी दावेदारी के लिए उपयोग करने लगीं। यह बात **दुर्बा घोष** के शोध से भी मेल खाती है, जिन्होंने यह दर्शाया कि **स्वदेशी महिलाएँ** कैसे **ईस्ट इंडिया कंपनी की सत्ता को चुनौती** देकर खुद को एक **सार्वजनिक विषय** के रूप में मान्यता दिलवाने में सफल रहीं।

कंपनी के न्यायालय और मुगल विधि का उपयोग

कंपनी के न्यायालयों ने मुगल विधि का उपयोग इस तरह किया कि वे स्वदेशी समाज में अपनी वैधता स्थापित कर सकें। उनका उद्देश्य दोहरे थे:

1. कृषिगत समाज और उसकी संपत्ति पर कंपनी का **एकाधिकारपूर्ण राज्याधिकार** दर्ज करना,
2. निजी संपत्ति के रक्षक के रूप में अपनी भूमिका निभाना।

राधिका सिंघा के अनुसार, कंपनी के न्यायिक सुधारों में ब्रिटिश की न्याय के एकाधिकार संबंधी महत्वाकांक्षाएँ और **पूर्व-औपनिवेशिक प्रथाओं** को स्वीकारने की वास्तविक चाहतें दोनों शामिल थीं। ये तनाव वॉरन हेस्टिंग्स की 1772 की न्यायिक योजना में स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। **ट्रैवर्स** भी बताते हैं कि औपनिवेशिक कानून मुगलकालीन विवाद समाधान के रूपों में गहराई से निहित था।

मुगल विधि ने जसो और गिरिजा जैसे संपत्ति संपन्न महिलाओं को उस **कृषि-वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था में भाग लेने** का अवसर दिया जहाँ सौदे नाज़ुक थे और आसानी से टूट सकते थे। स्थानीय शक्ति संरचनाओं में निहित मुगल विधि ने उन्हें इस आर्टीकल के सन्दर्भित हिस्सों में वर्णित तरीकों से—इस्लामी न्याय, रिवाज़ी प्रथाएँ, राजसी आदेश, प्रशासनिक नौकरशाही—का उपयोग कर **लेन-देन में सक्रिय भूमिका निभाने** का माध्यम प्रदान किया।

1781 में बनारस में स्थापित कंपनी के न्यायालय (ब्रिटिश रेज़िडेंट कार्यालय, बनारस के स्थानीय न्यायालय, काज़ी कार्यालय, कर अधिकारी, एवं समुदाय नेता सहित) ने न्याय वितरण की प्रक्रिया को पूरी तरह बदल दिया। जसो और गिरिजा जैसे महत्त्वपूर्ण मातृशक्तियों ने अपनी **विधिक दावेदारी** को इन अधिकार-क्षेत्रों में साकार रूप दिया। यहाँ मैं यह पुनर्निर्मित करता हूँ कि कैसे इन मातृशक्तियों ने एक विस्तृत और बदलती मुगल विधिक परिदृश्य को समझकर अपनी पनाह अपने पक्ष में की।

मातृशक्तियाँ और विधिक बहुलता

जसो और गिरिजा इन मामलों में अकेली नहीं थीं। मैंने पाया कि कई दर्जन विधवा महिलाएँ—संपन्न और सामान्य—भी 18वीं सदी की विधिक अदालतों में सक्रिय थीं। वे **धरना**, समुदाय का समर्थन प्राप्त करना, स्थानीय अधिकारियों एवं नवाबों को याचिका देना, और काज़ी कार्यालय से कानूनी दस्तावेज प्राप्त करना जैसी रणनीतियाँ अपनाती थीं ताकि **अपनी संपत्ति की रक्षा और हस्तांतरण का अधिकार** सुनिश्चित कर सकें।

मैं जसो–गिरिजा विवाद के दस्तावेज़ों का उपयोग कर एक **माइक्रो-इतिहास** प्रस्तुत करता हूँ, जो बताता है कि कैसे इन विवादों को स्थानीय राजनीति में एक उपनिवेशी नैरेटिव के रूप में पेश किया गया—विशेषकर यह आरोप कि स्वदेशी न्यायालय भ्रष्ट थे।

यह अवधारणा मुझे उस तर्क पर ले जाती है कि **एक स्थानीय, लैंगिक-संवेदी इतिहास** देखने से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि कैसे **मातृत्व अधिकार और संपन्नता** ने इन महिलाओं को विशिष्ट शक्तिशाली एजेंट बना दिया—एक ऐसा एजेंट जिसने वंचित करने वाली उपनिवेशी कानून व्यवस्था के बीच अपनी जगह बनाए रखी।

राजस्व ठेकेदारी, राज्य रचना और विधि

राजस्व ठेकेदारी (इजारा) उस समय **क्षेत्रीय राज्य निर्माण** का महत्वपूर्ण माध्यम थी। बनारस, गंगीय मैदानों में स्थित, कृषि और व्यापार से समृद्ध था। **बनारस की राजघरानी** ने इजारा अधिकार प्राप्त कर अपने राजनीतिक प्रभुत्व को मजबूत किया।

वे **ईस्ट इंडिया कंपनी** की बढ़ती दखल से बचने और स्थानीय राजस्व-भूमि अधिकार बनाए रखने के लिए इजारा प्रणाली का उपयोग करती रहीं। उदाहरण के लिए, भू-भू-मिहार ब्राह्मणों तथा राजपूतों के कुछ परिवारों ने मुगल राजस्व ठेकेदारों से अधिकार लेकर **अपना राजनीतिक राज्यगत महत्व** सुनिश्चित किया।

जैसे-जैसे कंपनी ने अपने नियंत्रण को मजबूत किया, उसने महिलाओं और शक्तिशाली ग्रामीण घरानों को **नए विधिक एवं प्रशासनिक ढाँचे** के बाहर कर दिया। **1689 बाद** के स्थायी समझौतों में महिलाओं से राजस्व झूठे साबित होने की संभावना को आधार बनाकर उन्हें **विधिक रूप से वंचित कर दिया गया**।

लेख प्रस्तावित करता है कि इस पूरे प्रक्रिया में Company ने अपने **जेंडर-आधारित संरचनाओं** के द्वारा भूमि प्रबंधन में रीहमचोटी स्थापित की—जिसमें उनके सत्ता केंद्र (रीज़ीडेंट कोर्ट) पर अधिकार केंद्रीत हो गया।

बक्सर की लड़ाई के बाद बनारस में कंपनी की प्रभुता

1764 में बक्सर की लड़ाई में अवध के नवाब की पराजय के बाद, नवाब को ईस्ट इंडिया कंपनी को भारी युद्ध क्षतिपूर्ति देनी पड़ी। इसके साथ ही कंपनी को अवध की सीमाओं में—जिसमें बनारस भी शामिल था—**विशेष व्यापारिक अधिकार** प्राप्त हो गए। बनारस के सशक्त व्यापारिक नेटवर्क तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए कंपनी ने **बलवंत सिंह** को सफ़दरजंग के उत्तराधिकारी **शुजा-उद-दौला** के विरुद्ध सत्ता संघर्ष में समर्थन दिया।

बलवंत सिंह की 1770 में मृत्यु के पश्चात, कंपनी ने **उनके पुत्र चेत सिंह** को बनारस की रियासत की गद्दी पर बिठाया, जो अवध के शासक की इच्छा के विपरीत था। 1775 तक ब्रिटिश कंपनी ने **बनारस रियासत के भूभागों पर अवध का नियंत्रण समाप्त कर** दिया।

ब्रिटिश नियंत्रण में बनारस रियासत

इसके बाद से, बनारस के शासक परिवार को ब्रिटिश अधिकारियों का आश्रित बना दिया गया। **चेत सिंह** को केवल इस शर्त पर गद्दी पर बनाए रखा गया कि वह **कंपनी को वार्षिक राजस्व** देता रहेगा। ब्रिटिश रेज़िडेंट का कार्य था चेत सिंह को कंपनी के प्रति जवाबदेह बनाए रखना।

लेकिन यह संबंध अधिक समय तक नहीं टिक सका। चेत सिंह ने अपने परिवार और शासन व्यवस्था में कंपनी के हस्तक्षेप का विरोध किया। उन्होंने शिकायत की कि कंपनी के अधिकारी बिना कारण हस्तक्षेप करते थे और **संपत्तियों का अनुचित दोहन** करते थे। इसके साथ ही चेत सिंह से उपमहाद्वीप में कंपनी के विस्तारवादी युद्धों के लिए और धन की मांग की गई। इस बढ़ते दबाव के विरुद्ध 1781 में चेत सिंह ने **विद्रोह कर दिया**, जिसके फलस्वरूप उन्हें बनारस से निष्कासित कर दिया गया।

यह विद्रोह अवध दरबार तक फैल गया जहाँ **बेगमों ने कंपनी के विरुद्ध अपने संघर्ष को तीव्र कर दिया।** इस विद्रोह को गंगा के मैदानी क्षेत्रों में किसानों और स्थानीय जमींदारों का समर्थन मिला, जिनका आर्थिक भाग्य बनारस के शासक से जुड़ा था।

राजस्व ठेकेदारी और कंपनी का प्रशासनिक पुनर्गठन

बनारस की **राजस्व ठेकेदारी प्रणाली** ने ग्रामीण समाज के कई सामंती और व्यापारी परिवारों को रियासत से जोड़ने के अवसर दिए। लेकिन चेत सिंह के विद्रोह के बाद, कंपनी ने उनके उत्तराधिकारी (बलवंत सिंह के पौत्र) **महीपनारायण** पर लगान माँग को लगभग **दोगुना कर 40 लाख रुपये** कर दिया।

यह वृद्धि फिर से विद्रोह की आशंका को जन्म दे सकती थी, इसलिए **वॉरेन हेस्टिंग्स** ने राजस्व संग्रह की जिम्मेदारी **नायब (उपशासक)** के कार्यालय को सौंप दी। जब नई राजस्व माँगें पूरी नहीं हो पाईं, तो ब्रिटिश अधिकारियों ने शासक की बजाय नायब को दोषी ठहराया।

वॉरेन हेस्टिंग्स की संस्थागत सुदृढ़ीकरण नीतियाँ

हेस्टिंग्स ने अपने 1781 के पत्र में स्पष्ट किया कि महीपनारायण को यह सूचित कर दिया गया है कि **उसे कोई भी विशेषाधिकार या अधिकार नहीं दिया जाएगा** जिससे उसकी स्वतंत्रता की धारणा बन सके।

इसी वर्ष, हेस्टिंग्स ने बनारस में एक **नया दीवानी न्यायालय** स्थापित किया, जिसके प्रमुख एक **नवीन 'मुख्य मजिस्ट्रेट'** होंगे। इसके लिए **अली इब्राहीम खान** को नियुक्त किया गया—वे एक मुग़लकालीन पढ़े-लिखे न्यायविद और प्रशासक थे, जिन्होंने बिहार और बंगाल में सेवा दी थी और बाद में कंपनी के निकट आ गए।

मुख्य मजिस्ट्रेट के रूप में अली इब्राहीम खान को निम्नलिखित अधिकार दिए गए:

- कोतवाली (पुलिस) पर नियंत्रण,
- फौजदारी अदालत (Faujdari Adalat),
- दरोगा (पुलिस अधिकारी),
- तीन मौलवी (इस्लामी विद्वान),
- दीवानी अदालत और अधीनस्थ न्यायाधीशों पर नियंत्रण।

वह बनारस के शासक और ब्रिटिश रेज़िडेंट दोनों से **स्वतंत्र** थे। 1784 तक, अली इब्राहीम खान को और अधिक अधिकार मिल गए, जिससे वे नायब के **सलाहकार** बन गए और:

- **राजस्व समझौतों**,
- **कर अधिकारियों की नियुक्ति**, और
- अन्य प्रशासनिक मामलों में राय देने लगे।

पूंजी का स्रोत: पारिवारिक संबंध, घरेलू प्रबंधन और मुग़ल क़ानून

बनारस के शासक परिवार ने अवध के शासकों (और बाद में ईस्ट इंडिया कंपनी) के साथ हुए अपने राजस्व अनुबंधों को पूरा करने के लिए अधीनस्थ राजस्व किसानों के परिवारों पर निर्भरता रखी। कई जमींदार परिवार इस व्यवस्था में भाग लेने के इच्छुक थे और उन्होंने राजस्व खेती के अवसरों को अपने पक्ष में भुनाया। इन परिवारों की महिलाओं के पास सामाजिक और आर्थिक पूंजी को स्वतंत्र उपक्रमों में निवेश कर **नई कृषिपरक पारिवारिक कंपनियों की नींव रखने की संभावनाएँ** थीं। यदि हम इन पारिवारिक संबंधों और राजस्व खेती में अंतर्निहित **लैंगिक भूमिकाओं** की उपेक्षा करते हैं, तो हम कृषि पूंजी के अधिक समृद्ध इतिहास को खो बैठते हैं।

अठारहवीं सदी पर आधारित विद्वत्तापूर्ण शोधों ने इस ओर ध्यान दिलाया है कि किस प्रकार **स्वदेशी महत्वाकांक्षी व्यक्ति**, औपनिवेशिक शासन की ओर संक्रमण के दौर में अवसर खोज रहे थे। बनारस से संबंधित अध्ययनों में मुख्य रूप से पुरुष एजेंटों पर ध्यान केंद्रित किया गया है, जिन्हें '**नए आदमी**' या '**उद्यमी**' कहा गया—जो व्यापारी पूंजी के सहयोग से जोखिमपूर्ण राजस्व खेती के उपक्रमों की शुरुआत करते थे।

जब हम इन पुरुषों के पारिवारिक संबंधों की भी पड़ताल करते हैं, तो हमें **कृषिपरक पारिवारिक फर्म** की अधिक जटिल तस्वीर प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए, **देवकीनंदन** की बात करें। इतिहासकार उन्हें पूर्वी गंगीय क्षेत्र में शक्तिशाली राजस्व किसान के रूप में देखते हैं। परंतु उन्होंने यह विचार नहीं किया कि **देवकीनंदन की सफलता उनकी बड़ी बहन की वजह से भी हो सकती है**, जो कि बनारस के शासक परिवार के संबंधी और पूर्व नायब **जगदेव सिंह** की विधवा थीं।

हालाँकि उनके नाम का उल्लेख औपनिवेशिक अभिलेखों में नहीं है, परंतु **जगदेव सिंह की विधवा** ने कंपनी अधिकारियों को कई **अर्जी (याचिकाएँ)** दी थीं, जिनके माध्यम से हमें उनके अस्तित्व और भूमिका का पता चलता है। फिर ऐसा क्या कारण है कि उनका उल्लेख गायब है? इतिहास लेखन में इस प्रकार की अनुपस्थिति का एक कारण यह हो सकता है कि **प्रारंभिक आधुनिक भारत में परिवार और लिंग से जुड़े प्रश्नों को ऐतिहासिक शोध में पर्याप्त ध्यान नहीं मिला**। साथ ही, औपनिवेशिक अभिलेखों की प्रकृति भी ऐसी थी कि **महिलाओं की कानूनी चेतना को 'गैर-राजनीतिक' और 'गैर-आर्थिक' पारिवारिक श्रेणी** में डालकर दरकिनार कर दिया गया।

अब हम **जस्सो** के अभिलेखों की ओर ध्यान देते हैं। जस्सो, बनारस के शाही परिवार से जुड़े **प्रमुख राजस्व किसान परिवार की कुलमाता** थीं। उनका परिवार बनारस शहर में **घर, बाग़-बगीचे और बाज़ार** का मालिक था। जैसे-जैसे अठारहवीं सदी में गंगीय मैदानी क्षेत्रों में कुछ कुलीन परिवार धन और प्रभाव में बढ़े, जस्सो का परिवार भी एक **समृद्ध कृषिपरक उद्यम** के रूप में उभरा।

जस्सो के परिवार में उनके **पुत्र शीतल प्रसाद और उनकी पत्नी**, **जस्सो की बेटी, दामाद**, और **नातिन उदीन बीबी** शामिल थे। यह पूरा उद्यम जस्सो के नेतृत्व में था। वे दो बहनों में एक थीं, जिन्हें अपने **बांझ सौतेले भाई की बड़ी संपत्ति** विरासत में मिली थी। इस विरासत के अतिरिक्त, जस्सो के भाई स्वयं भी एक राजस्व किसान थे और जस्सो ने **उनके संपर्कों के माध्यम से अपनी स्वयं की कृषिपरक फर्म स्थापित की** और अपने बेटे को उसमें सम्मिलित किया।

हालाँकि वे स्वयं **संपत्ति की स्वामिनी और कुलमाता** थीं, उन्होंने अपने **दामाद, बेटी और नातिन** को कभी भी राजस्व अनुबंधों में प्रमुख स्थान नहीं दिया। लेकिन ये सभी सदस्य जस्सो के नेतृत्व में कार्यरत थे और उद्यम से जुड़े हुए थे। **उदीन**, जो परिवार की सबसे युवा सदस्य थीं, अपनी **उम्र, लिंग और वंश** के कारण सबसे कमज़ोर स्थिति में थीं।

जब 1786 में जस्सो की फर्म ने बनारस शासक से दो परगने लिए और उसे **कर भुगतान के लिए कर्ज़ की आवश्यकता पड़ी**,

तब जस्सो ने उदीन को **गिरिजा की व्यापारी फर्म को 3,000 रुपये का बंधन-पत्र (तीप)** देने के लिए तैयार किया। यह बंधन केवल 11 दिनों में चुकाना था। गिरिजा की फर्म ने तुरंत **उदीन को नज़रबंद कर दिया**, बिना खाना-पानी दिए। इस तरह का **सामाजिक और आर्थिक दबाव** व्यापारिक समुदायों में **प्रथागत दंडात्मक हथियार** के रूप में प्रयोग होता था।

साथ ही, गिरिजा की फर्म ने उदीन से **इकरारनामा (Iqranama)** लिखवाया—एक कानूनी दस्तावेज जिसमें ऋण की शर्तें स्वीकार की जाती हैं। यद्यपि इस इकरारनामे का विवरण नहीं मिलता, परंतु नंदिनी चटर्जी जैसे विद्वानों के अनुसार **इस्लामी कानून, स्थानीय रिवाज़ और फारसी प्रशासनिक प्रथाएँ** ऐसे दस्तावेज़ों की संरचना में योगदान करती थीं।

इस संकट की स्थिति में जस्सो का **दामाद भी सक्रिय हुआ** और उसने **औपनिवेशिक अदालत में शिकायत दर्ज की**। विभिन्न न्यायिक व्यवस्थाओं की मौजूदगी ने जस्सो के परिवार को समय और विकल्प दिए। उन्होंने इन विकल्पों का इस्तेमाल किया और **कंपनी की अदालतों को अपनी लेन-देन की दुनिया में खींच लाया**।

लेकिन जैसा कि हम अगले खंड में देखेंगे, उनका यह प्रयास तब तक सीमित था, जब तक कि कंपनी ने बनारस के शासक, अली इब्राहीम खान और अन्य स्थानीय अधिकारियों पर **वार्षिक कर संग्रह** सुनिश्चित करने के लिए दबाव नहीं बनाया।

लैंगिक जबरदस्ती, पूंजी के लिए प्रतिस्पर्धा और अधिकार क्षेत्र की जटिलताएं

पूंजी प्राप्त करने और ऋण को बढ़ाने या वसूलने की प्रक्रिया में शारीरिक धमकी और जबरदस्ती आम थी। लेनदारों के पास अपना बकाया वसूलने के लिए "निजी बल प्रयोग करने का अधिकार" सुरक्षित था। यह अधिकार उन्हें मुग़ल क़ानून के अंतर्गत विभिन्न कानूनी प्राधिकरणों और 'रूढ़िगत अधिकार स्रोतों' की बहुलता द्वारा प्राप्त था। साहूकार न केवल उधार लेने वालों से, बल्कि अन्य प्रतिस्पर्धी लेनदारों से भी अपना धन सुरक्षित करते थे, जो उसी उधारकर्ता से बकाया मांग रहे होते थे। अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध में, वे साहूकार जो सबसे पहले उधारकर्ता या उसकी संपत्ति को जब्त कर लेते या ऋण वसूली की शिकायत दर्ज कर देते, वे पूरे ऋण की वसूली का अधिकार जताते थे।

इस तरह की जबरदस्ती केवल लेनदारों तक सीमित नहीं थी। एक ऐसे समय में जब राज्य की संप्रभुता बहुल और परतदार थी, यह जबरदस्ती भी न्याय प्राप्त करने के कई तरीकों में से एक थी। महत्वपूर्ण बात यह है कि साहूकारों को उपलब्ध न्यायिक विकल्प, जैसे मुग़ल क़ानून और स्थानीय प्रथाएं, उधारकर्ताओं को भी उनके खिलाफ उपाय करने का अवसर देते थे। जैसो जैसी रैयतदार महिलाएं इसी न्यायिक बहुलता पर निर्भर थीं।

ऋण की वसूली एक लैंगिक और जाति आधारित प्रक्रिया थी। इसके लिए हमें उन परिवारों और घरेलू संबंधों को देखना होगा, जो इन व्यावसायिक प्रतिष्ठानों का हिस्सा थे। पूरी जैसो परिवार ने गिरिजा और उसके बेटे जयकरण से चुनौती का सामना करने में भूमिका निभाई। अनुबंध की शर्तों के अनुसार, उदीन को 11 दिनों के भीतर गिरिजा की फर्म को 3,000 रुपये चुकाने थे। हालांकि बंध पत्र स्वीकार कर लिया गया था, फिर भी परिवार पर भारी दबाव डाला गया। गिरिजा और जयकरण ने ब्राह्मण महिलाओं को जैसो के घर भेजा, जिन्होंने वहां *धरना* दिया — यह आमतौर पर उपवास के माध्यम से विरोध प्रकट करने की प्रथा थी। धरने में शामिल महिलाएं केवल खुद उपवास नहीं करती थीं, बल्कि घर के सदस्यों को भी भोजन और पानी से वंचित करती थीं।

जैसो के घर में घुसकर इन महिलाओं ने अपने ब्राह्मण होने का लाभ उठाया, जो जातिगत पवित्रता के विचार से जुड़ा था। उपवास द्वारा आत्मकष्ट देकर वे जैसो के परिवार को यह जताती थीं कि उनके ऋण न चुकाने से परिवार पाप का भागी बन रहा है। एक गवाह के अनुसार, गिरिजा की फर्म के पुरुष कर्मचारियों ने बाहर *धरना* दिया जबकि ब्राह्मण महिलाओं ने अंदर। जैसो के परिवार ने पहले इस "आंतरिक धरने" से मुक्ति पाने के लिए कुछ रकम अदा की।

पूर्वी गंगा घाटी में ब्राह्मण किसान अक्सर कर वसूली के विरोध में आत्मदाह जैसी रणनीति अपनाते थे। कई बार पुरुष वृद्ध या असहाय ब्राह्मण महिलाओं को चोट पहुंचाकर राज्य का विरोध करते थे। लेकिन खुद असहाय ब्राह्मण महिलाएं भी आत्मकष्ट के बल पर संरक्षण प्राप्त करती थीं। वे शासन के अनुयायी बनकर लंबी यात्राओं पर जातीं, तीर्थ स्थलों में धरना देकर संपत्ति में अपना हिस्सा मांगतीं। उन्होंने सार्वजनिक स्थानों पर अधिकार जताकर पितृसत्तात्मक संबंधों और उपनिवेशी राज्य दोनों को चुनौती दी।

इस जातिगत और धार्मिक शक्ति संतुलन के बीच जैसो जैसी उधारकर्ता महिला को भी अपनी आर्थिक ज़रूरतों को पूर्ति करनी होती थी। उदीन के बंदी रहने के दौरान जैसो के घर के अन्य सदस्य पूंजी व्यवस्था करने और गिरिजा की फर्म के खिलाफ समर्थन जुटाने में लगे रहे। धरने के बाद, उदीन के पिता ने बनारस के उपनिवेशी न्यायालय के अली इब्राहीम ख़ान के समक्ष शिकायत दर्ज कराई कि उनकी बेटी को बंदी बना लिया गया है और परिवार को भोजन-पानी से वंचित किया जा रहा है। अली इब्राहीम ख़ान ने मामले की जांच के लिए एक संदेशवाहक और सिपाही भेजा।

मुग़ल क़ानून ने इस प्रकार की स्थानीय संप्रभुताओं और कानूनी तंत्र को मान्यता दी थी, जिससे न्यायालय सीधे ग्रामीण समाज से जुड़ गया। 1787 के अंत तक, ब्रिटिश अधिकारी जोनाथन डंकन ने अली इब्राहीम ख़ान की मदद से व्यापक राजस्व सर्वेक्षण और दशकीय बंदोबस्त लागू किया। डंकन ने न्यायिक और राजस्व प्रशासन पर अपना प्रभाव

बढ़ाया, भले ही अलग राजस्व न्यायालय की योजना निरस्त हो गई हो।

ब्रायन ट्रैवर्स के अनुसार, कंपनी द्वारा स्थापित 'कटचहरी न्यायालय' पहले बंगाल में बने थे, जो मुग़ल *खालसा अदालतों* पर आधारित थे। इनमें मुग़ल संप्रभुता, शरीअत और स्थानीय परंपराओं के अनुरूप मामलों की सुनवाई होती थी। ब्रिटिशों ने इन अदालतों को अपने राजस्व संग्रह के प्रभावी उपकरण में परिवर्तित कर दिया।

हालांकि ये अदालतें सतही रूप से स्थानीय न्याय को महत्व देती थीं, परंतु वास्तव में इनका उद्देश्य कंपनी की कर वसूली को सुनिश्चित करना था। गिरिजा और जैसो की फर्मों के विवाद में यही दोहराया गया। जब जैसो की फर्म ऋण भुगतान में विफल रही, तब वह गिरिजा की फर्म की सेवाएं लेने में असमर्थ हो गई। इससे बनारस के शासक को भुगतान में कठिनाई आई, जिन्होंने तब कंपनी के समर्थन की मांग की। डंकन ने गिरिजा से बकाया वसूलने के लिए दबाव डाला, लेकिन जब गिरिजा के पुत्र ने यह तर्क दिया कि शासक पहले बकाया वसूलने की कोशिश कर रहे हैं, तो डंकन ने अली इब्राहीम ख़ान से स्थानीय न्याय अनुसार समाधान निकालने को कहा।

हालांकि 'न्याय' की बात कही गई, फिर भी जैसो की एक संपत्ति को तुरंत नीलाम कर दिया गया, और प्राप्त राशि कंपनी के राजस्व खाते में दर्ज कर दी गई। गिरिजा का मुकदमा हालांकि अली इब्राहीम ख़ान की अदालत में चलता रहा।

इन घटनाओं से स्पष्ट है कि उपनिवेशी राज्य 'सरकारी अनुबंध' को अन्य व्यावसायिक संबंधों से ऊपर मानता था, जबकि वे ही संबंध इसे संभव बनाते थे। जैसो के घर पर *धरना* और शासक द्वारा की गई कार्रवाइयों से स्पष्ट होता है कि कंपनी की कोषागार तक पूंजी पहुँचने की प्रक्रिया में कितने स्थानीय, पारिवारिक, जातिगत और लैंगिक संबंध जुड़े हुए थे।

1788 तक, कंपनी ने अली इब्राहीम ख़ान और अन्य स्थानीय अधिकारियों को अपने नियंत्रण में ले लिया और बनारस के रेजिडेंट के अधीनस्थ बना दिया।

इन मुकदमों और विवादों में जैसो और गिरिजा जैसी महिलाओं की सक्रिय भूमिका सामने आती है। उनके प्रयासों ने यह सिद्ध किया कि वे न केवल अपने व्यापार की प्रमुख थीं, बल्कि कानूनी प्रणाली की जटिलताओं को भली-भांति समझती थीं और उसे अपने लाभ के लिए प्रयोग करती थीं। यहाँ तक कि उपनिवेशी अभिलेखों में भी उनकी भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सका।

निष्कर्ष

बनारस में, बनारस नरेश की अदालत, शाही परिवार की मातृसत्ता की अदालत, अली इब्राहीम ख़ान के अधीन कंपनी की अदालतें, क़ाज़ी का दफ़्तर, राजस्व अधिकारी, और समुदाय के प्रमुख सदस्यों द्वारा गठित मध्यस्थ सभा—सभी अलग-अलग स्तरों पर सत्ता साझा करते थे। यह राजनीतिक वातावरण एक गतिशील मुग़ल साम्राज्य की उपज था, जिसमें संप्रभुता और अधिकार क्षेत्र का विकेंद्रीकरण हुआ करता था। विधिक बहुलवाद की भावना ने यह सुनिश्चित किया कि विवादकर्ता अपने मामले को कई सत्ताओं के समक्ष प्रस्तुत कर सकें। जो वादकारी इस जटिल राजनीतिक और कानूनी संरचना को समझते थे, वे बेहतर निर्णय की आशा में अपने मामले को विभिन्न न्यायिक स्थलों पर ले जाते थे।

उदाहरण के लिए, मिर्जापुर की एक विधवा सेवा ने अपनी जातिवादी पितृसत्तात्मक बिरादरी और परिवार का विरोध करते हुए, पति की मृत्यु के 24 वर्ष बाद अपने ससुराल पक्ष से संपत्ति प्राप्त की। उसकी शिकायतों पर बनारस नरेश चैत सिंह की अदालत, उनकी माता पन्ना की अदालत और मिर्जापुर के प्रमुख व्यापारियों द्वारा गठित एक पंचायती सभा ने विचार किया। सेवा ने अपनी प्राप्त संपत्ति का एक हिस्सा शाही मातृसत्ता की अदालत को अर्पित किया और शेष से वह एक कपड़ा व्यापारी बनीं और अपने परिवार की मुखिया बन गईं, जिसमें उनकी बेटी, दामाद और नाती-नातिन शामिल थे।

वर्षों बाद, जब सेवा की मृत्यु हुई, तो उनके देवर के बेटों ने उनकी संपत्ति पर दावा करते हुए उन्हें एक कुटिल, चतुर और कलहप्रिय महिला बताया, जिसने अपने पति और ससुर के बीच भाईचारा बिगाड़ा था। उन्होंने सेवा की बेटी पर भी जातीय मर्यादाओं के उल्लंघन का आरोप लगाया क्योंकि उसने पितृसत्तात्मक आदेशों का विरोध किया। लेकिन सेवा के उत्तराधिकारियों ने निडर होकर पन्ना की उत्तराधिकारी गुलाब कुवर से न्याय की गुहार लगाई। गुलाब कुवर ने क्षेत्रीय राजस्व अधिकारियों को विवाद की जांच कर रिपोर्ट प्रस्तुत करने का आदेश दिया।

पन्ना और गुलाब कुवर, दोनों शासक मातृसत्ताएं, राजवंशीय सत्ता साझेदारी के माध्यम से प्रभावशाली बनीं। बहुपत्नी परिवारों में उत्तराधिकार संघर्षों और राज्य निर्माण की राजनीति ने उन्हें शासकों की पत्नी और माता के रूप में, साथ ही एक ज़मींदार महिला के रूप में, अधिकार प्रदान किया। जैसो, देवकीनंदन की बहन और गिरिजा जैसी महिलाएं भी अपनी उम्र, संपत्ति, मातृसत्ता और शाही परिवार के समीपता के आधार पर राजस्व कृषिक और वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों में उभरीं। सेवा जैसी कम प्रभावशाली महिलाओं ने शाही मातृसत्ताओं की अदालतों का सहारा लेकर अपने परिवारों से संपत्ति निकलवाई और अपने मुकदमों के ज़रिए शाही परिवार को ग्रामीण समाज से जोड़ा।

यह राजवंशीय सत्ता साझेदारी मुग़ल राज्य की उस पुनर्वितरणात्मक संप्रभुता की निरंतरता थी, जो उसकी प्रमुख विशेषता थी। किंतु, अठारहवीं सदी के अंतिम दशक में कंपनी ने पूर्वी गंगा मैदान के कृषिजन्य अर्थव्यवस्था पर संप्रभुता का एकाधिकार स्थापित करने की कोशिश की। इस उद्देश्य की

पूर्ति के लिए कंपनी ने "लैंगिकता" को एक उपकरण के रूप में प्रयोग किया। 1789 से शुरू होकर ब्रिटिश अधिकारियों ने महिलाओं को दीर्घकालीन राजस्व ठेकों में भागीदार बनाने की उपयुक्तता पर प्रश्न उठाए। शाही मातृसत्ताएं और अन्य संपन्न महिलाएं अपने पुरुष संबंधियों और प्रतिनिधियों के माध्यम से इस व्यवस्था में शामिल रहीं, लेकिन यह प्रतिनिधित्व स्वयं में जोखिम भरा था, जैसा कि देवकीनंदन की बहन के मामले में स्पष्ट हुआ। ऐसे प्रतिनिधित्व की प्रथा ने पितृवंशीय ज़मींदारों की सत्ता को और मज़बूत किया।

इन विधवाओं को अपने पितृवंशों में "प्रबंधक" के रूप में पुरुष संबंधियों को नियुक्त करने का अनुष्ठान, कंपनी के रेज़िडेंट कार्यालय की सत्ता के अधीन इन ज़मींदार बिरादरियों को और जकड़ता चला गया।

कंपनी द्वारा एक 'अधिकारविहीन नारीत्व' की रचना का उद्देश्य यह था कि मातृत्व और पीढ़ीगत अधिकार को अपदस्थ किया जाए—जो महिलाएं जैसे जैसो अपने घर के भीतर और बाहर विभिन्न सत्ता केंद्रों में उपयोग करती थीं, उन अधिकारों को समाप्त किया जाए। इस लेख में प्रस्तुत स्थानीय राजनीति की माइक्रोहिस्ट्री यह दर्शाती है कि किस प्रकार कंपनी ने एक बहुविध विधिक परिदृश्य में हस्तक्षेप किया, जहां संप्रभुता समाज में फैली हुई थी।

ब्रिटिश अधिकारियों ने जैसो जैसी महिलाओं को घरेलू क्षेत्र तक सीमित करके उन्हें उन सार्वजनिक और राज्यीय स्थलों से दूर करने की कोशिश की, जहां वे प्रभावशाली थीं। इस प्रक्रिया में उन्होंने एक पुरुषप्रधान औपनिवेशिक सार्वजनिक क्षेत्र की कल्पना की, जिसमें कंपनी बनारस की उपजाऊ गंगा-घाटी और उसके संसाधनों पर एकमात्र संप्रभु बनकर उभरे।

References:

1. जोनाथन डंकन की रिपोर्ट का अंश, गवर्नर-जनरल जॉन शोर को प्रेषित, तिथि उपलब्ध नहीं; उत्तर प्रदेश क्षेत्रीय अभिलेखागार, इलाहाबाद (UPRAA), रेज़िडेंट की कार्यवाही, बस्ता 15, वॉल्यूम 82, पृष्ठ 1–128।
2. मुज़फ़्फर आलम, *मुग़ल उत्तर भारत में साम्राज्य का संकट: अवध और पंजाब, 1707–48*, दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1986।
3. क्रिस्टोफर बैली, *शासक, नगरवासी और बाज़ार: ब्रिटिश विस्तार के युग में उत्तर भारतीय समाज 1770–1870*, कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1998; तीसरा संस्करण, पृष्ठ 198–205।
4. फ़रहत हसन, *मुग़ल भारत में राज्य और स्थानीयता: पश्चिम भारत में शक्ति संबंध, 1572–1730*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004, पृष्ठ 37–38।
5. डेविड वॉशब्रुक, 'प्रगति और समस्याएं: लगभग 1720–1860 के दौरान दक्षिण एशियाई आर्थिक और सामाजिक इतिहास', *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, खंड 22, अंक 1, 1988।
6. जोस गोम्मन्स, *मुग़ल युद्धकला: भारतीय सीमाएं और साम्राज्य की सड़कों तक पहुँच*, न्यू यॉर्क: रूटलेज, 2002।
7. देखें: आलम, *क्राइसिस ऑफ एम्पायर*, पृष्ठ 75–76 और 95–133।
8. आलम, *क्राइसिस ऑफ एम्पायर*, पृष्ठ 133।
9. वॉशब्रुक, 'प्रगति और समस्याएं', पृष्ठ 70; जॉन मैकलेन, *अठारहवीं सदी के बंगाल में ज़मीन और स्थानीय राजशाही*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1993।
10. रिचर्ड बार्नेट, *उत्तर भारत साम्राज्यों के बीच: अवध, मुग़ल और ब्रिटिश, 1720–1801*, बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, 1980।
11. रॉबर्ट ट्रैवर्स, *अठारहवीं सदी के भारत में विचारधारा और साम्राज्य: बंगाल में ब्रिटिश*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2007, पृष्ठ 43–55।
12. बैली, *शासक, नगरवासी और बाज़ार*। ऋतु बिरला, *स्टेजेस ऑफ कैपिटल: कानून, संस्कृति और औपनिवेशिक भारत में बाजार शासन*, डरहम: ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस, 2009; बैली; कुमकुम चटर्जी, *ईस्टर्न इंडिया में व्यापारी, राजनीति और समाज: 1733–1820*, लीडेन: ई.जे. ब्रिल, 1996, पृष्ठ 178–204;
13. करेन लियोनार्ड, 'हैदराबाद में पारिवारिक फर्में: गुजराती, गोस्वामी और मारवाड़ी गोद, विवाह और उत्तराधिकार के पैटर्न', *कम्पेरेटिव स्टडीज़ इन सोसाइटी एंड हिस्ट्री*, खंड 53, अंक 4, 2011, पृष्ठ 827–854।
14. समीरा शेख, 'जीभाभू के घी पर अधिकार: 1803–10 के बीच गुजरात में ज़मीन नियंत्रण और स्थानीय पूंजीवाद', *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, खंड 51, अंक 2, 2017, पृष्ठ 350–374।
15. बैली, *शासक, नगरवासी और बाज़ार*, पृष्ठ 381; बर्नार्ड कोहन, *एन एंथ्रोपोलॉजिस्ट अमंग द हिस्टोरियन्स*, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987, पृष्ठ 373। अन्य दृष्टिकोणों के लिए देखें: इंद्राणी चटर्जी, *फॉरगॉटन फ्रेंड्स: पूर्वोत्तर भारत में साधु, विवाह और स्मृति*, दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2013;
16. चैटरजी, 'महिलाएं, मठवासी व्यापार और संरक्षण'; डैना एगमोन, *अ कॉलोनियल अफेयर: फ्रेंच इंडिया में वाणिज्य, धर्मांतरण और घोटाले*, कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस, 2017; रोचिशा नारायण, 'अठारहवीं सदी के भारत में विधवाएं, परिवार

और एंग्लो-हिंदू कानून का निर्माण', *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, खंड 50, अंक 3, 2016।

17. बिरला, *स्टेजेस ऑफ कैपिटल*, पृष्ठ 16, 53–59; राचेल स्टर्मन, *द गवर्नमेंट ऑफ सोशल लाइफ इन कोलोनियल इंडिया*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2012; म्यथेली श्रीनिवास, *वाइव्स, विडोज़, कंक्यूबाइन्स: उपनिवेशिक भारत में परिवार की अवधारणा*, इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस, 2008, पृष्ठ 45–66।

18. लिंडा निकोलसन, 'नारीवाद और मार्क्सवाद: पारिवारिकता को आर्थिक संरचना से जोड़ना', *द सेकंड वेव: ए रीडर इन फेमिनिस्ट थ्योरी*, न्यू यॉर्क: रूटलेज, 1997, पृष्ठ 131–146।

19. राज्य, परिवार और वाणिज्य के परस्पर संबंध के लिए देखें: इंद्राणी चटर्जी, *जेंडर, स्लेवरी एंड लॉ इन कोलोनियल इंडिया*, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1999; सुमित गुहा, 'अठारहवीं सदी के भारत में पारिवारिक झगड़े को राजनीतिक संसाधन के रूप में देखना', *अनफेमिलियर रिलेशन्स*, संपादक: इंद्राणी चटर्जी, न्यू ब्रंसविक: रटगर्स यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004, पृष्ठ 73–94।

20. एलिसन बैंक्स फाइंडली, 'मरियम-उज़-ज़मानी के जहाज़ की जब्ती: मुग़ल महिलाएं और यूरोपीय व्यापारी', *जर्नल ऑफ अमेरिकन ओरिएंटल सोसाइटी*, खंड 108, अंक 2, 1988; गैविन हैम्बली, *वीमेन इन द मीडिएवल इस्लामिक वर्ल्ड*, न्यू यॉर्क: सेंट मार्टिन्स प्रेस, 1998; राम्या श्रीनिवासन, 'परिवार को सम्मान देना', *अनफेमिलियर रिलेशन्स*; विलियम पिंच, *वॉरियर एसेटिक्स एंड इंडियन एम्पायर्स*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2006।

21. इंद्राणी चटर्जी, *जेंडर, स्लेवरी एंड लॉ*; रिचर्ड बार्नेट, 'एमबैटल्ड बेगम्स: प्रारंभिक आधुनिक भारत में शक्ति के दलाल के रूप में महिलाएं'; रोचिशा नारायण, 'ए मुग़ल मैट्रिआर्क एंड द पॉलिटिक्स ऑफ मदरहुड इन अर्ली कोलोनियल इंडिया', *जर्नल ऑफ वीमेन'स हिस्ट्री*, खंड 32, अंक 2, 2020; निकोलस एबॉट, '"इट ऑल कम्स फ्रॉम मी"'।

22. बार्नेट, 'एमबैटल्ड बेगम्स'।मराठा शासक अहिल्या बाई की वाराणसी में व्यापार और धर्म संबंधी योगदान के लिए देखें: जेम्स प्रिंसेप, *बनारस इलस्ट्रेटेड*, तीसरी श्रृंखला, कलकत्ता: बैपटिस्ट मिशन प्रेस, 1833, पृष्ठ 14–15; एम.एस. देसाई, *बनारस रिकंस्ट्रक्टेड: आर्किटेक्चर एंड सेक्रेड स्पेस इन ए हिंदू होली सिटी*, सिएटल: यूनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन प्रेस, 2017।

23. नंदिनी चटर्जी, *नेगोसिएटिंग मुग़ल लॉ: ए फैमिली ऑफ लैंडलॉर्ड्स अक्रॉस थ्री इंडियन एम्पायर्स*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2020, पृष्ठ 39–40; जूलिया स्टीफेंस, *गवर्निंग इस्लाम: लॉ, एम्पायर एंड सेक्युलरिज़्म इन साउथ एशिया*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2018।

24. उपनिवेशीय न्यायालयों में स्वदेशी विषयों के लिए देखें: एन. ब्रिम्नेस, 'बियॉन्ड कोलोनियल लॉ', *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, खंड 37, अंक 3, 2003; लक्ष्मी सुब्रमणियन, 'ए ट्रायल इन ट्रांज़िशन', *इंडियन इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री रिव्यू*, खंड 41, अंक 3, 2004।

25. घोष, *सेक्स एंड द फैमिली*। राधिका सिंहा, *ए डेसपोटिज्म ऑफ लॉ: अपराध और न्याय*, दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1998।

26. ट्रैवर्स, *आइडियोलॉजी एंड एम्पायर*, पृष्ठ 116–117।

27. रॉबर्ट ट्रैवर्स, *एम्पायर ऑफ कम्प्लेंट्स: मुग़ल लॉ एंड द मेकिंग ऑफ ब्रिटिश इंडिया, 1765–1793*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 2022, पृष्ठ 71–112।

INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERPRETATION OBSERVATION & ANALYSIS